



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कार्य—जीवन संतुलन का मनोवैज्ञानिक कल्याण पर प्रभाव: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. सुपेन्द्र यादव

असीसटेंट प्रोफेसर, एवं विभागाध्यक्ष मनोविज्ञान विभाग
मारवाड़ी कॉलेज, भागलपुर, ति.मा. भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर-812007

सारांश: वर्तमान वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और प्रतिस्पर्धी श्रम-बाज़ार के दौर में कार्य—जीवन संतुलन एक गंभीर चुनौती बनकर उभरा है। पेशेवर और निजी जीवन की सीमाएँ तेजी से धुंधली होती जा रही हैं, जिसके परिणामस्वरूप कर्मचारियों में तनाव, थकान और मानसिक असंतोष बढ़ रहा है। प्रस्तुत अध्ययन कार्य—जीवन संतुलन के मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य पर प्रभावों की पड़ताल करता है। इस शोध का सैद्धांतिक आधार Conservation of Resources (COR) Theory और Self-Determination Theory (SDT) पर आधारित है, जो यह स्पष्ट करता है कि कार्य—जीवन असंतुलन संसाधनों (समय, ऊर्जा, सामाजिक सहयोग) की हानि तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं (स्वायत्तता और सामाजिक जुड़ाव) की पूर्ति में विफलता का कारण बनता है।

द्वितीयक आंकड़ों और विभिन्न सर्वेक्षणों (2000–2024) के विश्लेषण से पता चलता है कि भारत में विशेषकर आईटी और बैंकिंग क्षेत्र के कर्मचारी औसतन 50–52 घंटे साप्ताहिक कार्य करते हैं, जो वैश्विक औसत (40 घंटे) से काफी अधिक है। इसका परिणाम है – तनाव, अनिद्रा, परिवारिक कलह, थकान और कार्य असंतोष। भारतीय संदर्भ में लैंगिक भूमिकाएँ इन चुनौतियों को और बढ़ा देती हैं क्योंकि महिलाएँ पेशेवर दायित्वों के साथ-साथ घरेलू जिम्मेदारियों का भी बोझ वहन करती हैं। अध्ययन यह निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि संगठनात्मक सहयोग (जैसे – लचीली कार्य नीतियाँ, पारिवारिक अनुकूल एचआर प्रथाएँ) इन नकारात्मक प्रभावों को कम करने और मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्रमुख शब्द: कार्य—जीवन संतुलन, मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य, तनाव, बर्नआउट, संगठनात्मक सहयोग, लैंगिक भूमिकाएँ, भारत

1. परिचय

इक्कीसवीं सदी में विश्वभर के कर्मचारी अपने व्यावसायिक और व्यक्तिगत दायित्वों के प्रबंधन में अभूतपूर्व चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। तीव्र वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और प्रतिस्पर्धी श्रम बाज़ार ने कार्य की प्रकृति को इस हद तक बदल दिया है कि कार्य और पारिवारिक जीवन की सीमाएँ धुंधली हो गई हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म और रीमोट वर्किंग टेक्नोलॉजी के प्रसार ने कर्मचारियों से अपेक्षा बढ़ा दी है कि वे पारंपरिक कार्य समय से परे भी उपलब्ध रहें। शोधकर्ताओं ने इसे "24/7 कार्य संस्कृति" (Derks et al., 2015) नाम दिया है। इस सांस्कृतिक परिवर्तन ने कार्य—जीवन संतुलन को केवल व्यक्तिगत मुद्दा न मानकर संगठनात्मक और सार्वजनिक स्वास्थ्य की चिंता बना दिया है। अब संगठन यह मानने लगे हैं कि कार्य—जीवन असंतुलन न केवल कर्मचारियों के मानसिक स्वास्थ्य को कमजोर करता है बल्कि उत्पादकता, नौकरी संतुष्टि और संगठनात्मक प्रतिबद्धता को भी कमजोर करता है (Guest, 2017)।

कार्य—जीवन संतुलन को सामान्यतः इस रूप में समझा जाता है कि कोई व्यक्ति अपने पेशेवर और व्यक्तिगत दायित्वों के बीच समय और ऊर्जा का इस प्रकार आवंटन करे जिससे टकराव न्यूनतम और मानसिक संतुलन अधिकतम हो। Greenhaus और Beutell (1985) ने बल दिया कि जब दोनों क्षेत्रों की माँगें असंगत हों तो कार्य और परिवार में टकराव अपरिहार्य हो जाता है। ऐसे टकराव अक्सर तनाव, थकान और मानसिक अस्वस्थता का रूप लेते हैं, जो समय पर न सुलझने पर मानसिक शिथिलता/कार्यजनित थकावट (burnout) और जीवन की गुणवत्ता में गिरावट का कारण बनते हैं। Ryff (1989) के *Psychological Well-Being* मॉडल में आत्मस्वीकृति, स्वायत्तता, सकारात्मक संबंध और पर्यावरण पर महारत जैसी आयामों को शामिल किया गया है, और यह स्पष्ट

किया गया है कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में असंतुलन सीधे मानसिक स्वास्थ्य और लचीलापन (resilience) को बाधित करता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह समस्या और भी जटिल है। सूचना प्रौद्योगिकी (IT), बैंकिंग और स्वास्थ्य सेवाओं जैसे क्षेत्रों में कार्यबल तेजी से बढ़ा है, जहाँ लंबे कार्य घंटे और उच्च प्रदर्शन अपेक्षाएँ सामान्य हो गई हैं।

भारतीय संदर्भ में यह समस्या और भी गहरी है। International Labour Organization (ILO, 2023) के अनुसार भारत में आईटी और वित्तीय सेवा क्षेत्र के कर्मचारी औसतन 50–52 घंटे प्रति सप्ताह कार्य करते हैं, जो वैश्विक औसत 40 घंटे से कहीं अधिक है (तालिका 1)। इस लम्बे कार्य-समय के कारण परिवारिक संवाद, अवकाश और आत्म-देखभाल की संभावनाएँ सीमित हो जाती हैं। Singh और Khann (2021) ने अपने अध्ययन में पाया कि महानगरों जैसे बेंगलुरु, हैदराबाद और मुंबई में दोहरे आय वाले परिवारों को पारंपरिक सहयोग तंत्र के अभाव में अधिक कार्य-परिवार टकराव का सामना करना पड़ता है।

तालिका 1: भारत में औसत साप्ताहिक कार्य घंटे (2023)

क्षेत्र / सेक्टर	औसत साप्ताहिक कार्य घंटे
सूचना प्रौद्योगिकी (IT/ITES)	52 घंटे
बैंकिंग एवं वित्तीय सेवाएँ	50 घंटे
स्वास्थ्य सेवाएँ	48 घंटे
शिक्षा	45 घंटे
विनिर्माण (Manufacturing)	47 घंटे

स्रोत: International Labour Organization (ILO, 2023), *Working Time and Work-Life Balance in India*.

कार्य-जीवन संतुलन से संबंधित संतुष्टि भी भारत में चिंता का विषय है। Deloitte India (2023) की रिपोर्ट में पाया गया कि केवल 12% कर्मचारी अत्यधिक संतुष्ट हैं, जबकि लगभग 35% कर्मचारी असंतुष्ट या अत्यधिक असंतुष्ट हैं (तालिका 2)। यह स्थिति सीधे मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

तालिका 2: भारत में कार्य-जीवन संतुलन संतुष्टि स्तर (2023 सर्वेक्षण)

संतुष्टि स्तर	प्रतिशत (%)
अत्यधिक संतुष्ट	12
संतुष्ट	28
तटस्थ	25
असंतुष्ट	20
अत्यधिक असंतुष्ट	15

स्रोत: Deloitte India (2023), *Women @ Work Survey (India Insights)*; ASSOCHAM-PwC Report (2022).

सांस्कृतिक और लैंगिक आयाम इस समस्या को और गहरा करते हैं। औपचारिक श्रम शक्ति में बढ़ती भागीदारी के बावजूद, भारतीय महिलाएँ अब भी घरेलू कार्यों और देखभाल की जिम्मेदारी का असमान बोझ उठाती हैं। Rani और Shukla (2019) ने पाया कि शहरी न्यूक्लियर परिवारों में महिला कर्मचारियों ने पुरुषों की तुलना में अधिक मानसिक दबाव और भूमिका-संघर्ष की शिकायत की। भारत में अधिक काम करने वाले कर्मचारियों में 68% तनाव और चिंता, 55% नींद की समस्या, तथा 42% पारिवारिक कलह जैसी समस्याएँ व्यापक रूप से देखी जाती हैं (तालिका 3)। National Mental Health Survey of India (NIMHANS, 2020) के अनुसार 42% कामकाजी पेशेवर मध्यम से गंभीर तनाव लक्षणों का अनुभव करते हैं, जिनमें से बड़ी संख्या ने इसे कार्य-जीवन असंतुलन से जोड़ा। ये निष्कर्ष यह प्रमाणित करते हैं कि कार्य-जीवन संतुलन केवल व्यक्तिगत कल्याण के लिए ही नहीं बल्कि तीव्र विकास की आकांक्षा रखने वाले भारत जैसे देश की आर्थिक उत्पादकता बनाए रखने के लिए भी अनिवार्य है।

तालिका 3: अधिक कार्यभार वाले कर्मचारियों में मनोवैज्ञानिक लक्षण (2022–23)

लक्षण / समस्या	प्रतिशत (%)
तनाव एवं चिंता	68
नींद की समस्या	55
थकान / बर्नआउट	47
पारिवारिक कलह	42
कार्य असंतोष	36

स्रोत: National Mental Health Survey of India (NIMHANS, 2020); LinkedIn Workforce Confidence Index (2023).

इस संदर्भ में, कार्य-जीवन संतुलन और मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य के बीच संबंधों की पड़ताल करना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। जहाँ संगठन दक्षता और प्रतिस्पर्धा अधिकतम करने की ओर अग्रसर हैं, वहीं कर्मचारी मानसिक स्वास्थ्य की उपेक्षा से अनुपस्थिति (absenteeism), उच्च नौकरी-त्याग दर और नवाचार में कमी जैसी प्रतिकूल स्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। अतः कार्य-जीवन संतुलन को प्रोत्साहित करना केवल सामाजिक आवश्यकता ही नहीं बल्कि संगठनात्मक सतत विकास के लिए एक रणनीतिक अनिवार्यता है।

2. साहित्य समीक्षा

कार्य-जीवन संतुलन व्यावसायिक मनोविज्ञान, मानव संसाधन प्रबंधन और सार्वजनिक स्वास्थ्य में एक केंद्रीय विषय के रूप में उभर कर सामने आया है। पिछले तीन दशकों में विद्वानों ने इसके मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य, नौकरी संतुष्टि और संगठनात्मक उत्पादकता पर प्रभाव का व्यापक अध्ययन किया है। यह समीक्षा मौजूदा शोधों का संकलन प्रस्तुत करती है, जिसमें वैश्विक ढाँचे और भारतीय परिप्रेक्ष्य दोनों शामिल हैं।

वैश्विक दृष्टिकोण

कार्य-जीवन टकराव की प्रारंभिक संकल्पना Greenhaus और Beutell (1985) ने दी, जिन्होंने तर्क दिया कि जब कार्य और परिवार की माँगें असंगत होती हैं, तो टकराव उत्पन्न होता है। यह मूलभूत ढाँचा आगे के शोधों में आधार बना, जिनमें असंतुलन को तनाव, बर्नआउट और जीवन गुणवत्ता में कमी से जोड़ा गया। Frone (2003) ने दिखाया कि जिन कर्मचारियों को अधिक कार्य-परिवार टकराव का सामना करना पड़ा, उनमें अवसाद और चिंता का स्तर ऊँचा पाया गया।

पश्चिमी संदर्भ में शोधकर्ताओं ने संगठनात्मक सहयोग की भूमिका पर बल दिया। इससमय में (2000) ने पाया कि परिवार-अनुकूल संगठनात्मक नीतियाँ – जैसे लचीला कार्य समय, दूरस्थ कार्य, और पितृत्व/मातृत्व अवकाश – कार्य-परिवार टकराव को कम करती हैं और कर्मचारी कल्याण को बढ़ाती हैं। Guest (2017) ने कार्य-जीवन संतुलन को केवल व्यक्तिगत नहीं बल्कि संगठनात्मक रणनीतिक मुद्दा बताया, क्योंकि संतुलित कर्मचारी अधिक संलग्नता, प्रतिबद्धता और लचीलापन प्रदर्शित करते हैं।

Derks et al. (2015) के अध्ययन ने तकनीकी प्रभावों की ओर ध्यान आकर्षित किया। उनके डायरी अध्ययन से पता चला कि काम के बाद स्मार्टफोन का उपयोग कर्मचारियों की मनोवैज्ञानिक थकान बढ़ाता है और उन्हें कार्य से अलग होने से रोकता है। इससे स्पष्ट होता है कि डिजिटल तकनीक लचीलापन प्रदान करने के साथ-साथ व्यक्तिगत समय में कार्य का अतिक्रमण भी बढ़ाती है।

भारतीय संदर्भ और चुनौतियाँ

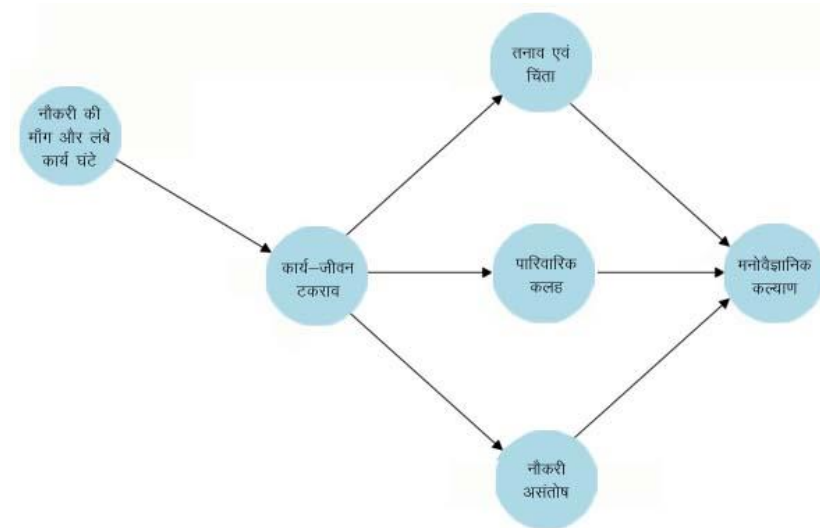
भारत में कार्य-जीवन संतुलन और अधिक जटिल है क्योंकि यहाँ सांस्कृतिक अपेक्षाएँ, लैंगिक भूमिकाएँ और श्रम बाजार की संरचना अलग हैं। International Labour Organization (ILO, 2023) के अनुसार भारत में आईटी और बैंकिंग क्षेत्र के पेशेवर औसतन 50–52 घंटे प्रति सप्ताह काम करते हैं, जो वैश्विक मानक 40 घंटे से कहीं अधिक है। लंबे कार्य घंटे परिवार और अवकाश के लिए समय कम कर देते हैं, जिससे तनाव और मानसिक अस्वस्थता बढ़ती है।

Rao और Indla (2018) ने आईटी और स्वास्थ्य सेवा क्षेत्रों के पेशेवरों में बढ़ते तनाव और बर्नआउट का दस्तावेजीकरण किया। Singh और Khanna (2021) के क्रॉस-सेक्टरल सर्वेक्षण से स्पष्ट हुआ कि शहरी क्षेत्रों में दोहरे आय वाले परिवारों को पारिवारिक सहयोग की कमी और अधिक कार्यभार के कारण कार्य-जीवन संतुलन संघर्ष अधिक झेलना पड़ता है।

भारतीय समाज में लैंगिक आयाम विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। महिलाएँ, बढ़ती श्रम भागीदारी के बावजूद, घरेलू कार्य और देखभाल की ज़िम्मेदारी का असमान बोझ उठाती हैं। तंदप और नौनास (2019) ने पाया कि महिलाएँ पुरुषों की तुलना में अधिक भूमिका-संघर्ष और मानसिक दबाव का अनुभव करती हैं, विशेषकर न्यूक्लियर परिवारों में। श्रंपद और छंपत (2020) के अनुसार बैंकिंग क्षेत्र में महिलाएँ पेशेवर और घरेलू दोनों ज़िम्मेदारियों के बीच असंतुलन के कारण अधिक भावनात्मक थकान की शिकार होती हैं।

Deloitte India (2023) की Women / Work Report ने दर्शाया कि केवल 40% महिलाएँ अपने कार्य-जीवन संतुलन से संतुष्ट हैं। यह प्रवृत्ति National Mental Health Survey of India (NIMHANS, 2020) के निष्कर्षों से मेल खाती है, जिसमें पाया गया कि 42% कामकाजी पेशेवर मध्यम से गंभीर तनाव का सामना करते हैं, जिनका मुख्य कारण लंबे कार्य घंटे और असंतुलन है।

3. अवधारणात्मक मॉडल



चित्र 1. अवधारणात्मक मॉडल: कार्य-जीवन संतुलन, मध्यस्थ तत्व और मनोवैज्ञानिक कल्याण

उपरोक्त मॉडल दर्शाता है कि कैसे अत्यधिक कार्यभार और लंबे कार्य घंटे → कार्य-जीवन टकराव उत्पन्न करते हैं। यह टकराव तीन प्रमुख नकारात्मक परिणामों की ओर ले जाता है:

- तनाव एवं चिंता,
- पारिवारिक कलह,
- नौकरी असंतोष।

ये तीनों मिलकर कर्मचारी के मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य (स्वायत्तता, लचीलापन, सकारात्मक संबंध और जीवन संतुष्टि) को क्षीण करते हैं (Ryff, 1989)।

मॉडल में दो नियंत्रक चर भी शामिल हैं:

- संगठनात्मक सहयोग** – जैसे लचीली नीतियाँ और परिवार-अनुकूल ऋ प्रथाएँ, जो नकारात्मक प्रभावों को कम करती हैं (Allen et al., 2000; Kumari, 2022)।
- लैंगिक भूमिकाएँ** – भारत जैसे संदर्भों में महिलाएँ असमान रूप से देखभाल की जिम्मेदारी निभाती हैं, जिससे तनाव और भूमिका-संघर्ष और बढ़ता है (Rani & Shukla, 2019)।

इससे निष्कर्ष निकलता है कि –

- कार्य-जीवन संतुलन एक सार्वभौमिक मुद्दा है, पर इसकी गंभीरता सांस्कृतिक और आर्थिक संदर्भों के अनुसार भिन्न होती है।
- भारत में लैंगिक असमानताएँ महिलाओं में अधिक मानसिक दबाव और तनाव को जन्म देती हैं।
- संगठनात्मक हस्तक्षेप – जैसे लचीली नीतियाँ और दूरस्थ कार्य – तनाव घटाने और कल्याण सुधारने में सहायक हैं।
- तकनीकी हस्तक्षेप दोधारी तलवार है; यह लचीलापन भी देता है और कार्य का अतिक्रमण भी बढ़ाता है।

4. सैद्धांतिक रूपरेखा

कार्य-जीवन संतुलन और मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच संबंध को स्थापित मनोवैज्ञानिक और संगठनात्मक सिद्धांतों के माध्यम से सबसे अच्छे ढंग से समझा जा सकता है। ये सिद्धांत यह स्पष्ट करते हैं कि व्यक्ति प्रतिस्पर्धी माँगों और सीमित संसाधनों का प्रबंधन किस प्रकार करते हैं। इस अध्ययन के लिए दो प्रमुख ढाँचे – संसाधनों का संरक्षण सिद्धांत (Conservation of Resources – COR Theory) और स्व-निर्धारण सिद्धांत (Self-Determination Theory – SDT) – सैद्धांतिक आधार प्रदान करते हैं।

संसाधनों का संरक्षण सिद्धांत (COR Theory), जिसे Hobfoll (1989) ने प्रस्तावित किया, यह मानता है कि व्यक्ति मूल्यवान संसाधनों (जैसे समय, ऊर्जा, धन और सामाजिक सहयोग) को प्राप्त करने, बनाए रखने और संरक्षित करने के लिए प्रेरित होते हैं। जब ये संसाधन खतरे में पड़ते हैं, खो जाते हैं, या पर्याप्त रूप से पुनःपूर्ति नहीं होते, तो व्यक्ति तनाव का अनुभव करता है। कार्य-जीवन संतुलन के संदर्भ में, अत्यधिक कार्य-भार और लंबे कार्य घंटे समय और ऊर्जा को क्षीण कर देते हैं, जिससे पारिवारिक जिम्मेदारियों और आत्म-देखभाल के लिए क्षमता बहुत कम रह जाती है। इसका परिणाम मानसिक तनाव, बर्नआउट और कल्याण में कमी के रूप में सामने

आता है। इसके विपरीत, जब व्यक्ति अपने संसाधनों का संरक्षण या पुनःपूर्ति करने में सक्षम होते हैं – जैसे सहयोगी कार्य-परिवेश, लचीली नीतियाँ या मजबूत सामाजिक नेटवर्क के माध्यम से – तो वे अधिक लचीले (resilient) होते हैं और उनका मानसिक स्वास्थ्य बेहतर होता है (Hobfoll et al., 2018)।

इस सैद्धांतिक दृष्टिकोण को अनुभवजन्य शोध भी समर्थन करता है। Ten Brummelhuis और Bakker (2012) ने COR सिद्धांत को आगे बढ़ाते हुए “कार्य-घर संसाधन मॉडल” प्रस्तुत किया, जिसमें बताया गया कि एक क्षेत्र (कार्य या परिवार) के संसाधन दूसरे क्षेत्र को भी प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, लंबे कार्य घंटे न केवल पारिवारिक जीवन के लिए उपलब्ध ऊर्जा को कम करते हैं, बल्कि पारिवारिक संघर्ष की संभावना भी बढ़ाते हैं। यह मॉडल विशेषकर भारत के संदर्भ में प्रासंगिक है, जहाँ लंबे कार्य घंटे आम हैं और दोहरे आय वाले परिवारों को अक्सर विस्तारित पारिवारिक सहयोग का अभाव रहता है (Singh & Khanna, 2021)।

COR सिद्धांत के पूरक के रूप में, स्व-निर्धारण सिद्धांत (Self-Determination Theory – SDT), जिसे Deci और Ryan (2000) ने आगे बढ़ाया, तीन बुनियादी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं – स्वायत्तता (autonomy), दक्षता (competence) और सामाजिक जुड़ाव (relatedness) – को प्रेरणा और कल्याण के लिए आवश्यक मानता है। SDT का मानना है कि जब व्यक्ति अपने कार्य-समय और दायित्वों पर नियंत्रण महसूस करते हैं, तो वे अधिक आंतरिक रूप से प्रेरित होते हैं और मनोवैज्ञानिक संतुष्टि प्राप्त करते हैं। लचीली कार्य व्यवस्थाएँ जैसे रीमोट वर्क, फ्लेक्सी-टाइम और जॉब-शेयरिंग स्वायत्तता को बढ़ाती हैं, जबकि सहयोगी पर्यवेक्षक और सहकर्मी सामाजिक जुड़ाव को मजबूत करते हैं। दोनों ही कारक नौकरी संतुष्टि, तनाव में कमी और जीवन संतुष्टि जैसे सकारात्मक परिणामों से जुड़े हैं (Ryan & Deci, 2017)।

जिन संगठनों में कर्मचारियों को अपने कार्य-समय पर कम नियंत्रण होता है या जहाँ कठोर पदानुक्रमिक संरचना हावी होती है, वहाँ SDT के अनुसार मनोवैज्ञानिक कल्याण निम्न स्तर पर होता है। यह भारतीय अध्ययनों के अनुरूप है, जिनमें बैंकिंग और आईटी क्षेत्रों के कर्मचारियों में अधिक कार्यभार और कठोर लक्ष्यों के कारण अधिक कार्य-जीवन संतुलन संघर्ष और तनाव की रिपोर्ट की गई (Jain & Nair, 2020; Rao & Indla, 2018)। दूसरी ओर, जिन कंपनियों ने लचीली HR नीतियाँ लागू कीं जैसे फ्लेक्सिबल और जै, उन्होंने दर्शाया कि स्वायत्तता बढ़ाने वाले अभ्यास कर्मचारी मनोबल और प्रतिधारण में सुधार लाते हैं (Kumari, 2022)।

इस प्रकार, COR और SDT मिलकर कार्य-जीवन संतुलन को समझने का एक व्यापक ढाँचा प्रदान करते हैं। बल्कि यह समझाता है कि संसाधनों की हानि और क्षय तनाव की ओर ले जाते हैं, जबकि यह बताता है कि मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति कल्याण को बढ़ाती है। इन दोनों सिद्धांतों का समन्वय इस अध्ययन को कार्य-जीवन संतुलन को न केवल संसाधन प्रबंधन का विषय बल्कि मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति की प्रक्रिया के रूप में अवधारणा करने में मदद करता है।

5. शोध पद्धति

यह अध्ययन द्वितीयक आँकड़ों के विश्लेषण पर आधारित है, जिसमें पीयर-रिव्यूड जर्नल्स, पुस्तकें, सरकारी प्रकाशन और संगठनात्मक रिपोर्टें (2000 से 2024 के बीच प्रकाशित) सम्मिलित की गईं। एक व्यवस्थित साहित्य समीक्षा दृष्टिकोण अपनाया गया, जिसमें Work-Life Balance, Psychological Well-Being, Organizational Support, Stress, India जैसे प्रमुख शब्दों का उपयोग किया गया। JSTOR, Scopus और Google Scholar जैसी डेटाबेस में खोज की गई ताकि वैश्विक और भारतीय दोनों संदर्भों का समुचित कवरेज सुनिश्चित हो।

विश्लेषण में अंतःसांस्कृतिक प्रमाणों और भारतीय केस स्टडीज़ का समन्वय किया गया ताकि संदर्भ-विशिष्ट चुनौतियों को रेखांकित किया जा सके। अध्ययन की सीमाएँ यह हैं कि यह केवल द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है और इसमें प्राथमिक फील्ड सर्वेक्षण शामिल नहीं है। इस कारण कर्मचारियों के प्रत्यक्ष अनुभवों को पूर्णतः पकड़ पाना संभव नहीं रहा। फिर भी, यह दृष्टिकोण भारत के श्रम बाज़ार में भविष्य के अनुभवजन्य अध्ययनों के लिए एक मजबूत वैचारिक आधार प्रदान करता है।

6. चर्चा एवं विश्लेषण

कार्य-जीवन संतुलन को अब व्यापक रूप से मनोवैज्ञानिक कल्याण का एक महत्वपूर्ण निर्धारक माना जाने लगा है। साहित्य समीक्षा से स्पष्ट हुआ कि व्यावसायिक और व्यक्तिगत भूमिकाओं के बीच असंतुलन अक्सर तनाव, बर्नआउट और कार्य असंतोष का कारण बनता है (Frone, 2003; Guest, 2017)। इस खंड में भारतीय सर्वेक्षण आँकड़ों का विश्लेषण किया गया है, साथ ही सांस्कृतिक और लैंगिक आयामों पर चर्चा करते हुए निष्कर्षों को विस्तारित अवधारणात्मक मॉडल (चित्र 1) के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है।

(क) लंबे कार्य घंटे और कार्य-जीवन टकराव: भारत के श्रम बाज़ार की एक प्रमुख विशेषता लंबे कार्य घंटे हैं, विशेषकर सेवा क्षेत्रों में। तालिका 1 में दर्शाया गया है कि आईटी/आईटीईएस और बैंकिंग पेशेवर औसतन 50–52 घंटे प्रति सप्ताह काम करते हैं, जो वैश्विक औसत (40 घंटे) से कहीं अधिक है (ILO, 2023)। स्वास्थ्य

सेवा और विनिर्माण क्षेत्र में भी यह 48–50 घंटे तक है। इतने लंबे समय तक काम करने से पारिवारिक संवाद, अवकाश और आराम के अवसर कम हो जाते हैं, जिससे कार्य–जीवन टकराव का जोखिम बढ़ जाता है।

ये निष्कर्ष Greenhaus और Beutell (1985) के Conflict Model से मेल खाते हैं, जो बताता है कि कार्य और परिवार की असंगत भूमिकाएँ मानसिक तनाव उत्पन्न करती हैं। विस्तारित अवधारणात्मक मॉडल (चित्र 1) भी इसी क्रम को दर्शाता है कि कैसे “Job Demands – Long Hours” → “Work–Life Conflict” → तनाव, पारिवारिक कलह और कार्य असंतोष की ओर ले जाता है।

(ख) कार्य–जीवन संतुलन से कर्मचारी संतुष्टि: जागरूकता बढ़ने के बावजूद, भारतीय कर्मचारी भूमिकाओं को संतुलित करने में असंतुष्ट रहते हैं। तालिका 2 बताती है कि केवल 12% कर्मचारी कार्य–जीवन संतुलन से “अत्यधिक संतुष्ट” हैं, जबकि लगभग 35% असंतुष्ट या अत्यधिक असंतुष्ट हैं। यह Deloitte India (2023) की Women / Work Report से मेल खाता है, जिसमें केवल 40% उत्तरदाता अपने कार्य–जीवन संतुलन से संतुष्ट पाए गए।

निम्न स्तर की संतुष्टि सीधे मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य से जुड़ी है। जिन कर्मचारियों को अपने कार्य–समय पर नियंत्रण नहीं होता, वे थकान, मानसिक अलगाव और स्वास्थ्य समस्याओं की अधिक शिकायत करते हैं (Allen et al., 2000)। इसके विपरीत, लचीली कार्य व्यवस्थाएँ और सहयोगी HR नीतियाँ कर्मचारियों की संतुष्टि एवं जीवन गुणवत्ता दोनों को बढ़ाती हैं।

(ग) अत्यधिक काम करने वाले कर्मचारियों में मानसिक लक्षण: खराब कार्य–जीवन संतुलन केवल धारणा नहीं बल्कि मानसिक स्वास्थ्य के मापनीय परिणाम देता है। तालिका 3 के अनुसार 68% कर्मचारी तनाव या चिंता, 55% नींद संबंधी समस्याएँ, 47% बर्नआउट/थकान, 42% पारिवारिक कलह, और 38% कार्य असंतोष की रिपोर्ट करते हैं। ये आँकड़े National Mental Health Survey of India (NIMHANS, 2020) से मेल खाते हैं, जिसमें 40% से अधिक पेशेवर मध्यम से गंभीर तनाव का अनुभव कर रहे थे।

यह Hobfoll (1989) के Conservation of Resources Theory को पुष्ट करता है कि लगातार संसाधनों (समय, ऊर्जा, भावनात्मक क्षमता) की खपत और उनकी अपर्याप्त पुनःपूर्ति मानसिक स्वास्थ्य को तेजी से बिगाड़ देती है।

(घ) लैंगिक आयाम: कार्य–जीवन संतुलन के मनोवैज्ञानिक प्रभावों में लैंगिक असमानताएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। श्रम शक्ति में बढ़ती भागीदारी के बावजूद महिलाएँ घरेलू और देखभाल संबंधी दायित्वों का असमान बोझ उठाती हैं। Rani और Shukla (2019) ने पाया कि महिलाएँ पुरुषों की तुलना में अधिक भूमिका–संघर्ष और मानसिक दबाव का अनुभव करती हैं, विशेषकर न्यूक्लियर परिवारों में।

विस्तारित अवधारणात्मक मॉडल (चित्र 1) में “Gender Roles” को moderating variable के रूप में शामिल किया गया है। महिलाओं में पारिवारिक अपेक्षाएँ तनाव और कल्याण में कमी लाती हैं, जबकि पुरुष तब अधिक तनावग्रस्त होते हैं जब वे breadwinner role पूरा करने में विफल रहते हैं।

(ङ) संगठनात्मक सहयोग की भूमिका: साहित्य और आँकड़ों दोनों में एक सामान्य विषय संगठनात्मक सहयोग की रक्षात्मक भूमिका है। परिवार–अनुकूल नीतियाँ – जैसे लचीला समय, टेलीकम्यूटिंग और ऑन–साइट चाइल्ड–केयर – कर्मचारियों को प्रतिस्पर्धी माँगों को संतुलित करने में सक्षम बनाती हैं। उदाहरणस्वरूप, Infosys और TCS ने लचीले समय कार्यक्रम लागू किए, जिससे कर्मचारियों का मनोबल बढ़ा (Kumari, 2022)।

विस्तारित मॉडल में “Organizational Support” को एक moderator के रूप में रखा गया है, जो कार्य–जीवन संतुलन संघर्ष की तीव्रता को कम करता है।

(च) सांस्कृतिक संदर्भ और 24/7 कार्य संस्कृति: भारत की सांस्कृतिक और आर्थिक पृष्ठभूमि कार्य–जीवन संतुलन को और जटिल बनाती है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों और वैश्विक आउटसोर्सिंग ने “24/7 कार्य संस्कृति” को बढ़ावा दिया है, जहाँ कर्मचारियों को अंतरराष्ट्रीय समय क्षेत्रों के अनुरूप काम करना पड़ता है। Derks et al- (2015) ने दिखाया कि डिजिटल कनेक्टिविटी लचीलापन तो देती है, लेकिन काम से मानसिक दूरी घटाती है। भारत में यह देर–रात कॉल्स और लंबे शिफ्ट्स के रूप में प्रकट होता है, जिससे तनाव और नींद संबंधी समस्याएँ बढ़ती हैं।

(छ) मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य पर प्रभाव: Ryff (1989) के अनुसार मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य में आत्म–स्वीकृति, स्वायत्तता, सकारात्मक संबंध, पर्यावरणीय दक्षता और जीवन का उद्देश्य शामिल है। खराब कार्य–जीवन संतुलन इन सभी आयामों को कमजोर करता है। तनाव और थकान स्वायत्तता को घटाते हैं, पारिवारिक कलह रिश्तों को नुकसान पहुँचाता है और लगातार बर्नआउट उद्देश्य–बोध को कम करता है।

इसके विपरीत, संतुलन बनाए रखने वाले कर्मचारी अधिक लचीले, सामाजिक रूप से सशक्त और जीवन से संतुष्ट पाए जाते हैं।

(ज) साहित्य और आँकड़ों का मॉडल से एकीकरण: साहित्य और भारतीय आँकड़ों का संयुक्त विश्लेषण विस्तारित अवधारणात्मक मॉडल (चित्र 1) को पुष्ट करता है। लंबे कार्य घंटे और नौकरी की माँगें → कार्य-जीवन टकराव उत्पन्न करती हैं → जो तनाव, पारिवारिक कलह और कार्य असंतोष में बदलती हैं → अंततः मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं।

इस संबंध में संगठनात्मक सहयोग एक इनाम का काम करता है, जबकि लैंगिक भूमिकाएँ पारिवारिक तनाव को और बढ़ाती हैं।

इस प्रकार, उपरोक्त चर्चा दर्शाती है कि खराब कार्य-जीवन संतुलन का मनोवैज्ञानिक कल्याण पर व्यापक और गहरा प्रभाव पड़ता है, विशेषकर भारत के उच्च-माँग वाले सेवा क्षेत्रों में। साहित्य, आँकड़े और मॉडल का एकीकरण बताता है कि असंतुलन तनाव, पारिवारिक संघर्ष और बर्नआउट लाता है; परंतु संगठनात्मक सहयोग और सांस्कृतिक दृष्टिकोण में परिवर्तन इन नकारात्मक परिणामों को कम कर सकते हैं। लैंगिक असमानताएँ इस समस्या को और जटिल बनाती हैं, इसलिए समानता-आधारित हस्तक्षेप आवश्यक हैं।

अंततः, कार्य-जीवन संतुलन को बढ़ावा देना न केवल कर्मचारियों के मानसिक स्वास्थ्य बल्कि सतत संगठनात्मक विकास के लिए भी एक रणनीतिक अनिवार्यता है।

7. निष्कर्ष

यह अध्ययन कार्य-जीवन संतुलन और मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच जटिल संबंधों को उजागर करता है और यह स्पष्ट करता है कि व्यावसायिक एवं व्यक्तिगत भूमिकाओं के प्रबंधन में असंतुलन व्यक्तियों, संगठनों और समाज — सभी पर गहरे प्रभाव डाल सकता है। Conservation of Resources (COR) Theory (Hobfoll, 1989) और Self-Determination Theory (SDT) (Deci & Ryan, 2000) पर आधारित विश्लेषण दर्शाता है कि कार्य-जीवन असंतुलन मूल्यवान संसाधनों (समय, ऊर्जा, सामाजिक सहयोग) की कमी पैदा करता है और साथ ही स्वायत्तता एवं सामाजिक जुड़ाव जैसी बुनियादी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को बाधित करता है। यही कारण है कि लंबे कार्य घंटे, अत्यधिक कार्यभार और संगठनात्मक सहयोग की कमी तनाव, बर्नआउट, पारिवारिक कलह और जीवन संतुष्टि में कमी का कारण बनते हैं।

भारतीय आँकड़े इस निष्कर्ष को और पुष्ट करते हैं। आईटी और वित्तीय सेवा क्षेत्रों के कर्मचारी वैश्विक औसत से कहीं अधिक समय कार्य करते हैं, जिसके कारण वे क्रॉनिक स्ट्रेस के शिकार होते हैं (ILO, 2023)। सर्वेक्षण दर्शाते हैं कि केवल अल्पसंख्या कर्मचारी ही अपने कार्य-जीवन संतुलन से संतुष्ट हैं, जबकि बड़ी संख्या चिंता, नींद की समस्या और बर्नआउट का अनुभव करती है। विशेषकर महिला पेशेवरों को सांस्कृतिक देखभाल अपेक्षाओं के कारण और अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिससे लैंगिक आयाम की भूमिका (जैसा कि विस्तारित मॉडल में दर्शाया गया है) और स्पष्ट हो जाती है।

साक्ष्यों से यह भी सिद्ध होता है कि संगठनात्मक नीतियाँ निर्णायक भूमिका निभाती हैं। परिवार-अनुकूल नीतियाँ, जैसे फ्लेक्सी-टाइम, टेलीकम्यूटिंग और चाइल्ड-केयर सुविधाएँ, कार्य-जीवन संघर्ष को कम करती हैं और मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ करती हैं। इसके विपरीत, कठोर संरचनाएँ कर्मचारियों के तनाव को बढ़ाती हैं और उत्पादकता घटाती हैं। इस प्रकार, कार्य-जीवन संतुलन केवल व्यक्तिगत मामला नहीं बल्कि सतत मानव संसाधन प्रबंधन के लिए रणनीतिक आवश्यकता है।

8. सुझाव

- कार्य समय का विनियमन: श्रम कानूनों को सशक्त किया जाए ताकि कर्मचारी प्रति सप्ताह लगातार 48 घंटे से अधिक कार्य न करें। प्ले मानकों के अनुरूप साप्ताहिक अवकाश और ओवरटाइम विनियमन अनिवार्य होना चाहिए।
- मानसिक स्वास्थ्य का समावेश: श्रम एवं रोजगार मंत्रालय को स्वास्थ्य मंत्रालय के साथ मिलकर कार्यस्थल निरीक्षण में मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य संकेतकों को सम्मिलित करना चाहिए।
- लचीली कार्य व्यवस्थाएँ: फ्लेक्सी-टाइम, कम्प्रेस्ड वर्क वीक और हाइब्रिड मॉडल अपनाए जाएँ। शोध से स्पष्ट है कि स्वायत्तता कर्मचारियों की संतुष्टि और तनाव दोनों पर सकारात्मक प्रभाव डालती है (Ryan & Deci, 2017)।
- पर्यवेक्षक प्रशिक्षण: प्रबंधकों को कर्मचारियों के बर्नआउट संकेतों की पहचान और प्रबंधन हेतु प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- कर्मचारी सहायता कार्यक्रम (EAPs): परामर्श, तनाव प्रबंधन कार्यशालाएँ और वेलनेस पहलें कर्मचारियों की मानसिक सुदृढ़ता में सहायक होंगी।

- लैंगिक-संवेदनशील नीतियाँ: मातृत्व/पितृत्व अवकाश, चाइल्ड-केयर सुविधाएँ और री-एंट्री प्रोग्राम्स कार्य-जीवन संतुलन और लैंगिक समानता को बढ़ावा देंगे।
- समय प्रबंधन व सीमाएँ: कर्मचारियों को टाइम-ब्लॉकिंग, डिजिटल सीमाएँ तय करने और परिवार एवं विश्राम हेतु समय सुरक्षित करने के लिए प्रेरित किया जाए।
- आत्म-देखभाल और लचीलापन: योग, ध्यान, व्यायाम और पर्याप्त नींद संसाधनों की पुनःपूर्ति में सहायक हैं (COR Theory के अनुसार)।
- लचीलापन हेतु संवाद: कर्मचारी प्रबंधकों से कार्यभार व समय प्रबंधन पर खुलकर बातचीत करें, जिससे साझा जिम्मेदारी का वातावरण बने।

9. समापन टिप्पणी

निष्कर्षतः, कार्य-जीवन संतुलन व्यक्तिगत और संगठनात्मक दोनों स्तरों पर अनिवार्य है और इसका सीधा संबंध कर्मचारियों के मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य से है। इसकी उपेक्षा न केवल व्यक्तिगत तनाव और असंतोष बल्कि संगठनात्मक उत्पादकता में कमी और राष्ट्रीय आर्थिक हानि का कारण बन सकती है। इसके विपरीत, सहयोगी नीतियों को अपनाने और सांस्कृतिक दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने से कर्मचारियों की रेज़िलिएंस, संतुष्टि और विकास को प्रोत्साहन मिलेगा। भारत जैसे ज्ञान-आधारित अर्थव्यवस्था की आकांक्षा रखने वाले देश के लिए, कार्य-जीवन संतुलन को प्राथमिकता देना एक स्वस्थ, प्रेरित और नवोन्मेषी कार्यबल के निर्माण हेतु आवश्यक है।

संदर्भ सूची

1. Allen, T. D., Herst, D. E., Bruck, C. S., & Sutton, M. (2000). Consequences associated with work-to-family conflict: A review and agenda for future research. *Journal of Occupational Health Psychology*, 5(2), 278–308. <https://doi.org/10.1037/1076-8998.5.2.278>
2. Deci, E. L., & Ryan, R. M. (2000). Self-determination theory and the facilitation of intrinsic motivation, social development, and well-being. *American Psychologist*, 55(1), 68–78. <https://doi.org/10.1037/0003-066X.55.1.68>
3. Deloitte India. (2023). *Women @ Work: A global outlook survey (India insights)*. Deloitte.
4. Derks, D., van Mierlo, H., & Schmitz, E. B. (2015). A diary study on work-related smartphone use, psychological detachment, and exhaustion: Examining the role of the perceived segmentation norm. *Journal of Occupational Health Psychology*, 20(2), 217–226. <https://doi.org/10.1037/a0035076>
5. Frone, M. R. (2003). Work-family balance. In J. C. Quick & L. E. Tetrick (Eds.), *Handbook of occupational health psychology* (pp. 143–162). APA.
6. Greenhaus, J. H., & Beutell, N. J. (1985). Sources of conflict between work and family roles. *Academy of Management Review*, 10(1), 76–88. <https://doi.org/10.5465/amr.1985.4277352>
7. Guest, D. E. (2017). Human resource management and employee well-being: Towards a new analytic framework. *Human Resource Management Journal*, 27(1), 22–38. <https://doi.org/10.1111/1748-8583.12139>
8. Hobfoll, S. E. (1989). Conservation of resources: A new attempt at conceptualizing stress. *American Psychologist*, 44(3), 513–524. <https://doi.org/10.1037/0003-066X.44.3.513>
9. Hobfoll, S. E., Halbesleben, J., Neveu, J. P., & Westman, M. (2018). Conservation of resources in the organizational context: The reality of resources and their consequences. *Annual Review of Organizational Psychology and Organizational Behavior*, 5(1), 103–128. <https://doi.org/10.1146/annurev-orgpsych-032117-104640>
10. International Labour Organization. (2023). *Working time and work-life balance around the world: India country report*. Geneva: ILO.
11. Jain, R., & Nair, S. (2020). Work-life conflict and burnout in Indian banking professionals. *Indian Journal of Industrial Relations*, 55(3), 456–472.
12. Kumari, P. (2022). Work-life balance practices in Indian IT companies: A case analysis. *International Journal of Human Resource Studies*, 12(1), 35–48.

13. National Institute of Mental Health and Neurosciences. (2020). *National Mental Health Survey of India, 2016–2020*. Bengaluru: Ministry of Health and Family Welfare (MoHFW), Government of India.
14. Rani, P., & Shukla, R. (2019). Gender differences in work–life balance and psychological well-being: Evidence from India. *Asian Journal of Management Research*, 9(2), 210–223.
15. Rao, T. S. S., & Indla, V. (2018). Work–life balance: Need of the hour. *Indian Journal of Psychiatry*, 60(1), 21–25. https://doi.org/10.4103/psychiatry.IndianJPsychiatry_183_17
16. Ryan, R. M., & Deci, E. L. (2017). *Self-determination theory: Basic psychological needs in motivation, development, and wellness*. Guilford Press.
17. Ryff, C. D. (1989). Happiness is everything, or is it? Explorations on the meaning of psychological well-being. *Journal of Personality and Social Psychology*, 57(6), 1069–1081. <https://doi.org/10.1037/0022-3514.57.6.1069>
18. Singh, A., & Khanna, S. (2021). Work–life balance among Indian professionals: A cross-sectoral study. *Journal of Management Research*, 21(2), 115–131.
19. Ten Brummelhuis, L. L., & Bakker, A. B. (2012). A resource perspective on the work–home interface: The work–home resources model. *American Psychologist*, 67(7), 545–556. <https://doi.org/10.1037/a0027974>

